P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-I*September-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में स्त्री चेतना

विजयता कुमारी राम
सहायक आचार्या,
हिन्दी विभाग
पी0एन0दास एकेडमी
बर्नपुर, पश्चिमबंगाल

सारांश

उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में मुख्य रूप से स्त्री और उसके जीवन के चेतना के विविध आयाम समाहित हैं। स्त्री संघर्ष के साथ स्त्री चेतना का स्वरूप मुखर करते इनके उपन्यास स्त्री विमर्श के प्रमुख हस्ताक्षर है। उनके उपन्यास के नारी पात्र समय के साथ–साथ अधिक जागृत होते दिखाते है। उनके उपन्यास के पात्र "सुषमा" का विकसित होते हुए राधिका, अनु, वाना, यमन, आकाशगंगा बन कर स्त्री चेतना का समावेश करते हुए मुखर होती है।

मुख्य शब्दः चेतना–Consciousness, भावनात्मक –Sentimental, संत्रास –Penic, नैतिकता –morality Virtue, जीवन्त –Alive

प्रस्तावना

'चेतना' से तात्पर्य ऐसी ज्ञानमूलक मनोवृति,जिसमे जीव आंतरिक अनुभूतियों और बाह्य घटनाओ के तत्वों से अनुभव प्राप्त कर ऐसी स्तिथि में आ पाते है कि बुरे परिणामो या बातों से बचकर अच्छी बातो की ओर प्रवृत हो सके द्यसोच– समझ कर किसी बात की ओर ध्यान देने की सुविचारना ही चेतना है द्य चेतना मानव जाति की मुख्य विशेषता है, चेतना शब्द आत्मा का समानार्थी भी माना जाता और आत्मा का निवास मानव शरीर में है। यूँ कहे कि "चेतन मानस की प्रमुख विशेषता चेतना है अर्थात वस्तुओ विषयों, व्यवहारों का ज्ञान ।"[1]

नारी का स्थान इतिहास में सर्वोच्च रहा हैं। "नारी मनुष्य के इतिहास की जननी मानी गयी हैं। शास्त्रों के अनुसार सुकुमारता, सुन्दरता, प्रेम, वात्सल्य, दया और मधुरिमा की साकार प्रतिमा हैं नारी। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नारी पुरूष की अनुगामिनी मात्र न होकर सहचरी, सहधर्मिणी भी हैं। परंतु नारी के सम्बन्ध में कही गई यह धारणा निरंतर बदलती रही हैं। प्रत्येक युग परिवर्तन के साथ–साथ नारी की स्थिति में भी परिवर्तन होता रहा हैं।"[2] एक मानवीय इकाई के रूप में सभ्यता और संस्कृति के सर्वांगींण विकास में स्त्रियों की भागीदारी हमेशा से महत्वपूर्ण रही है परिवार और समाज की सहभागिता के अतिरिक्त वह निर्विवाद रूप में पुरुषो के आकर्षण का केंद्र भावनात्मक एंव शारीरिक दोनों रूपों में रही है । स्त्री अस्मिता को लेकर बाहरी और भीतरी स्तर का अन्तः संघर्ष लम्बे अरसे तक चला और समाजिक साहित्यिक विमर्श का एक स्वाभाविक एवं खास हिस्सा बन गया। "आधुनिक सन्दर्भ में स्त्री चेतना के आरम्भ की पहचान नवजागरण के उस अंकुर से की जा सकती हैं जिससे पराधीनता का बोध और उससे मुक्ति की अदम्य कमाना प्रस्फुटित हो रही थी ।"[3] यही कारण है कि समकालीन हिंदी साहित्य की केन्द्रीय संवेदना कमोवेश स्त्री चेतना एवं संघर्ष के कई रूप एवं रंग दिखते है मृदुला गर्ग के अनुसार "चेतना का सम्बन्ध अपने परिप्रेक्ष्य में रखकर अपनी स्थिति का मूल्यांकन करना हैं।चेतना के सहारे व्यक्ति निजी जीवन दृष्टी से प्रेरित होकर इतिहास, संस्कृति और मानवीय संबंधो को पुनः विश्लेषित करता हैं इस प्रकार जो दृष्टी नारी की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक छवि के तिलिस्म को तोड़े वह नारी चेतना है।"[4] यह स्त्री–चेतना समाज स्त्री की समानता की बात एक सुविचारना के माध्यम से व्यक्त करती है । समाज में स्त्री के उचित स्थान की मांग करते हुए महादेवी वर्मा अपने शब्दों में व्यक्त करती है "हमे न किसी की जय चाहिए, न किसी का प्रभुत्व केवल वह अपना स्थान वे स्वत्व चाहिए जिनका पुरुषों के निकट कोई उपयोग नहीं है परन्तु जिनके बिना समाज का उपयोगी अंग नही बन सकेगी ।"[5] स्त्री चेतना या स्त्री विमर्श की आवश्यकता समाज में स्त्रियों को क्यों पड़ी ?इस प्रश्न के उत्तर में अनेक युक्तियों को सम्मिलित किया जा सकता है । एक स्त्री हमेशा केवल इतना चाहती है कि उसे वस्तु नही बल्कि 'मनुष्य' के रूप में देखा जाए । यह बोध भी 'स्त्री चेतना' कहलाती है ।

उषा प्रियंवदा उन कथाकारों में से एक है। जिन्होंने आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की अनुभूति के सार को पहचान कर अपने रचनाओ में व्यक्त किया है। उनकी अधिकांश रचनाओ में उन्होंने स्त्री

जीवन की विभिन्न प्रकार की सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक समस्याओ को स्त्री चेतना की सुविचारना के माध्यम से अभिव्यक्ति दि है | उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में आधुनिक परिवेश में उदित नारी का चित्रण है। स्वतन्त्रता के बाद जो परिवर्तन नारी जीवन में आये पुराने मूल्यों को ना करने तथा नये मूल्यों को आत्मसात करने के परिणाम सूक्ष्मता से व्यक्त हुआ है । उषा प्रियंवदा के प्रमुख उपन्यास पचपन खम्भे लाल दीवारे, रुकोगी नहीं राधिका, शेषयात्रा, अंतर्वंशी ,भया कबीरा उदास, नदी है । इन उपन्यासों की अधिकांश कथाओ में आधुनिक नारियो के जीवन की झाँकियाँ प्रतिफलित हुई है, उनके ये उपन्यास मुख्यतः स्त्री–चेतना केन्द्रित और विशेषतः नायिका प्रधान है । स्त्री की नियति अस्मिता, दुःख–दर्द,जीवन संघर्ष तथा घुटन के साथ साथ उसका शिक्षित होना नौकरी करना परिवार का भरण–पोषण करना, व्यवसाय करना, नेतृत्व करना, अन्यास अत्याचार के प्रति विद्रोह करना, स्त्री पात्रो का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्य करना उषा जी की स्त्री–चेतना को उजागर करने में अत्यधिक कारगर सिद्ध होते है | इस तरह उषा जी ने नारी– जीवन के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक जीवन की गतिविधियों का चित्रण अपने साहित्य में किया है।

उषा प्रियंवदा का पहला उपन्यास है – "पचपन खम्बे लाल दीवारे" । इस उपन्यास में उषा जी ने सुषमा जैसे पात्र के माध्यम से आधुनिक भारतीय नारी की ऊब छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की स्थिति में नारी की सामाजिक आर्थिक विवशताओ से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्र छात्रावास के पचपन खम्बे और लाल दीवारों के बीच सुषमा की छटपटाहट के माध्यम से उद्घाटित किया है। उषा प्रियंवदा के उपन्यास 'पचपन खम्बे लाल दीवारे' की नायिका 'सुषमा' अपने परिवार की आर्थिक परेशानी को दूर करने के लिए शादी नही करती है सुशिक्षित सुषमा नौकरी पेशे से युक्त होते हुए भी वे रुढ़िग्रस्त समाज और नैतिक वर्जनाओ के साथ परिवार की समस्याओ को झेलती हुई अविवाहित रह जाती है । मध्यमवर्गीय समाज में सुषमा जैसे पात्र माता–पिता, भाई–बहन सभी अपनी इच्छाओ की पूर्ति के लिए नौकरी करती हुई तिल–तिल जलकर अपने सामाजिक दायित्व का पालन करती कब बूढ़ी हो जाती है उसे खुद पता नही चलता है । वह अपने परिवार के लोगो को पालने की मशीन बन कर रह गई है और वह इन संबंधो से इतना ऊब जाती है कि सारे संबंध उसे काटने को दौड़ते है, सुषमा के जीवन से निराश हो कह बैठती है। "यह कॉलेज ये खम्बे मेरी डेस्टिनी है मुझे यही छोड़ दो। "[6] सुषमा के जीवन में नील नामक एक पुरुष आता है अपने और एंकाकी जीवन में उसके प्रेम की स्निग्धता और आत्मीयता पाकर सुषमा पुलकित हो उठती है । अपने प्रेमी नील की बाँहों के मजबूत घेरे में सुषमा अपनी सारी पीड़ा और चोट भूल जाती है, क्योंकि नील एक कवच के समान उसकी समस्त आपत्तियों तथा समस्याओ से बचाए रखता है अपने ऐसे प्रेमी को भी वह यह कह कर निष्कासित करने के लिए विवश हो उठती है कि "मेरी बहुत जिम्मेदारियां है । तुमसे तो कुछ भी छिपा नहीं है । पक्षाघात से पीड़ित बाबू, दो बहने और भाई,सब मुझे करना है।"[7] अंततः वह अपने प्रेम भावना का दमन अपने परिवार के लिए कर देती है । फिर भी उनके कार्य की सराहना की अपेक्षा बदनामी ही लोगो के पास पहुँच जाती है। कामकाजी नारी के विषय में 'डा० प्रमिला कपूर' का कथन है "यह शब्द उन स्त्रियों के लिए प्रयुक्त हुआ है जो वेतनवाले काम धंधो में लगी है, उनके लिए नहीं जो समाज सेवा में रत है या अवैतनिक रूप से काम कर रही है ।[8] इस बात की पुष्टि 'सिनोम द बुआर' के शब्दों में भी मिलती है जब वे कहती है "स्त्री पैदा नहीं बल्कि उसे बना दिया जाता है ।"[9] बेटी, पत्नी, बहू और माँ की भूमिका से अलग उन्हें स्वंय अपनी भूमिका का एहसास और विश्वास होना, वक्त का तकाजा है। सुषमा अविवाहित रहकर चूँकि अपनी सार्थकता नहीं सिद्ध कर पाती है इसलिए उसका निर्णय उसकी नौकरी, उसकी आधुनिकता सभी कुछ स्त्री चेतना के ही अन्तर्गत है ।

अपने चर्चित उपन्यास 'रुकोगी नहीं राधिका' में उषा जी ने आज के मानसिकता में गहरे उतर कर, नारी की बदलती हुई मान्यताओ, विश्वासों और परिस्थितियों के बदलाव को अपनी लेखनी का आधार बनाया है । उषा जी ने अत्याधुनिक असामान्य नारी को समझने और समझाने का प्रयत्न किया है । 'रुकोगी नहीं राधिका' की राधिका एक सुखी परिवार की एकमात्र बेटी है । उसके पिता, भाई, भाभी सभी उसे प्यार करते है । माता के मरने के बाद वह पिता के अधिक निकट हो गयी है । किन्तु पिता की शारीरिक आवश्यकता 'विद्या' से विवाह करके पूरी होती है 'विद्या' राधिका के पिता से लगभग बीस वर्ष छोटी है, यह बात राधिका को विघटित करने लगती है और पिता के प्रति एक विरक्ति का भाव उसके मन में पैदा होने लगता है यह जख्म राधिका के मन को जिंदगी भर अपने पापा के घर में ही उसे अजनबी बनकर अकेलेपन की जिंदगी जीने के लिए मजबूर कर देता है । उसका अमेरिका जा कर अस्थायी रूप से अमेरिका में रह कर डेन के कार्यो में सहयोग करना, पुनःस्वदेश लौटने पर 'रिवर्स कल्चरल शॉक से गुजरती हुई ऐसा महसूस करती है कि – "मेरा परिवार मेरा परिवेश, मेरे जीवन की अर्थहीनता और मै स्वंय जो होती जा रही हूँ, एक भावहीन पुतली सी ।"यह सब राधिका के जीवन के अजनबीपन और संत्रास को प्रदर्शित करता है ।

राधिका के माध्यम से उषा प्रियंवदा ने एक अत्याधुनिक लड़की की मानसिक अंतर्दन्द दर्शाती है, जो विमाता का सानिध्य नही स्वीकारना चाहती है क्योंकि राधिका इलेक्ट्रा ग्रन्थि से ग्रस्त है । "प्रायः देखा गया है कि जो लडकियां इलेक्ट्रा काम्प्लेक्स से ग्रसित होती है वे विवाह करके सुखी नही होती ।"[10] इस कारण वह सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती है डैन राधिका की मनोवृति समझते हुए उसे युवा मित्र बनाने की सलाह देते है और कहते है – "सीमओं से निकलो, दुनिया देखों, अपनी सम्भावनाओ को विकसित करो, किसी युवा मित्र से ....।"[11]

यह उपन्यास स्त्री चेतना के साथ ही आधुनिक समाज में बदलते रिश्तो की प्रकृति से तालमेल न बैठा

पाने वाले अनेक व्यक्तियों और संबंधो को सूक्ष्म रूप से खोजती है द्यएक पिता का असामान्य व्यवहार के कारण सामान्य सन्तान अन्तर्विरोधो, विसंगतियों, संत्रास, घुटन आदि का शिकार बन जाती है । डा० वार्ष्णेय लिखते है कि "राधिका स्वतन्त्रता का विकास चाहती है, परम्परागत संस्कारो को तोड़ना चाहती है, अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व स्थापित करना चाहती है ।"[12] स्पष्ट है कि राधिका अपने व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के लिए समाज द्वारा दी गई नैतिकता,रुढियाँ और परम्पराओ की अवहेलना करती है जो आधुनिक स्त्री चेतना के रूप में सामने आती है । लेखिका ने राधिका के द्वारा हमारे समाज की उन थोड़ी बहुत जागरूक स्त्रियों के जीवन की त्रासदियों, दुःखों और बाधाओ की बड़ी बारीकी से सामने रखा है जो हर मूल्य पर नारी की समानता और स्वाभिमान को बनाये रखने के लिए संघर्ष करने में विश्वास करती है । वह व्यक्तित्व के सब बंधन तोड़ने वाली नारी के विद्रोह का प्रतीक बन कर उभरती है। "वह किसी की इच्छाओं के सामने नहीं झुकती और अपना निजित्व समाप्त करने के बजाय अलग हो जाना बेहतर समझती है ।"[13]

उषा प्रियंवदा जी का उपन्यास 'शेषयात्रा'स्त्री चेतना को एक नयी दिशा प्रदान करता है । इस उपन्यास को नारी जीवन की त्रासद स्तिथियों एवं उन त्रासद परम्परागत सम्थ्यहीनाता को तोड़ने का एक सबल दस्तावेज कहा जाता है । उपन्यास की नायिका 'अनु'के माध्यम से उषा जी ने विदेश की भूमि में पुरुष के विश्वासघात भारतीय वफादार पत्नी (अनु) के सामने पैदा होने वाली समस्याओ को सामने रखा है। इस उपन्यास में प्रवासी भारतीयों का ऐसा समाज उभर कर आया है जिसमे हर स्त्री अपने को असुरक्षित महसूस करती है, अपने पति की गतिविधियों के प्रति सतर्क रहने के बाद भी पतिव्रता स्त्री 'अनु' का पति 'प्रणव' अनु को छोड़ कर कई अन्य स्त्रियों से गूढ़ सम्बन्ध बनाता है और वफादार पत्नी अनु को असह्य अकेलापन में छोड़कर चला जाता है । अनु की समस्या आज के जन–सामान्य की समस्या बन कर उभर कर आती है ।

'शेष यात्रा' उपन्यास की अनु एक संघर्षशील स्त्री के रूप में उभर आती है जो विषम परिस्थिति में भी अपनी जिजीविषा बरकरार रखती है। दिव्या द्वारा मार्ग दर्शन कराने के बाद डॉक्टर बन कर, विश्वासघाती प्रणव की स्मृतियों में हाय–हाय करने की अपेक्षा स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, सम्मान और स्वतंत्र जीवन जीना स्वीकार करती है। उसे देख कर प्रणव को आश्चर्य होता है कि क्या यह वही अनु है जो उसी पर पूर्णतः निर्भर थी–"जिस पगली ,बौराई ,लड़की को छोड़ गया था क्या यह वही है? प्रखर, मौन, स्थिर। "अनु अहं का करार जवाब अपनी उपलब्धियों से देती है। उषा जी यहाँ यह दिखाना चाहती है कि पुरुष क समान स्त्री भी सबकुछ हासिल कर सकती है, जीवन के जिन ऊचाईयो को को पुरुष प्राप्त कर सकता है उन ऊँचाईयो तक स्त्री भी पहुँचा सकती है इसलिए अनु ना प्रणव के एहसान के नीचे दबती है ना पति द्वारा त्याग दिये जाने के बाद परम्पगत सामर्थ्यहीनता स्वीकार कर उसके नाम का लेवल लगाये रहने का इरादा रखती है । उसमे आत्मबोध की एक गहरी चेतना जग जाती है। इस उपन्यास के संबंध में 'ज्योति किरण लिखती है –"तमाम संघर्ष के बाद भी अनु का जीवन के प्रति एक संतुलित ,स्वस्थ दृष्टीकोण रखती है ,जबकि तमाम सुख ,ऐश्वर्य और भोग–विलास के बीच प्रणव कुछ हासिल नही कर पता है। अनु के माध्यम से उषा प्रियंवदा ने एक स्त्री में संघर्षशील चेतना को विकसित होते दिखायी है कि पति के संबल और सान्निध्य से दूर रहकर भी स्त्रियाँ नयी जिन्दगी पा सकती है । शेष यात्रा की 'अनु' बदलते समय और सोच की प्रतिबिम्बित करती है । आज क इस दौर में तलाकशुदा और पति द्वारा उपेक्षित लड़कियाँ किस तरह अपना 'स्व' ढूढ़ने लगी है, इसका सफल चित्रण उषा प्रियंवदा ने इस उपन्यास में किया है।"

'अंतर्वंशी' उपन्यास स्त्री चेतना एक अनोखा जीवन्त चित्र प्रस्तुत करता है । स्त्री जीवन शैली में आये बदलाव का दिग्दर्शन इस उपन्यास में हुआ है,जो पारिवारिक मान्यताओ के कारण अपने मन की न सुनकर सभी पम्पराओ और मान्यताओ को अनमने भाव से निभाती जाती है परन्तु अंततः वह विरोध करके अपने 'स्व' को स्वीकारती है। 'वाना' जो बनारस की बाँसुरी थी 'अमेरिका' में रहने वाले प्रवासी भारतीय 'शिवेश' से विवाह करके अपने घर परिवार का भी परित्याग करके विदेश आ जाती है। भारतीय मध्यवर्गीय परिवार अपनी कन्या का विवाह शिवेश जैसे प्रवासी से कराकर बहुत खुश होते है परन्तु वाना का मोहभंग तब होता है जब अमेरिका आने का सौभाग्य दुर्भाग्य में परिणित होता प्रतीत होता है। भारतीय मध्वर्गीय परिवार बेहतर अवसर की खोज में विदेशी जीवन शैली से प्रभावित होकर प्रवासी भारतीयों से अपनी कन्याओ का विवाह करा देना पर स्वयं को बहुत सौभाग्यशाली समझाने लगते है परन्तु विदेश जाने के बाद शुरू होता है संघर्ष और मोहभंग का अटूट सिलसिला। विदेशी समाज में लोग एक दुसरे से आगे जाने और सफलता पाने के पागलदौड़ में रत है औरो की उपलब्धियों और लाचारी के कसमकस में पड़ी वाना जैसे–तैसे गृहस्थी की गाड़ी खींचती हुई स्वाभाव से कुछ भिन्न हो जाती है। पति शिवेश की असमर्थताओ का दमघोट एहसास उसे क्रमशः पति के प्रति संवेदनहीन बना देता है जिसकी परिणति होती है उनके बीच का दामपत्य सम्बन्ध में ठंडापन आ जाता है । फिर भी एक पत्नी की भूमिका वाना निभाने को मजबूर है।

'वाना' आर्थिक संकटों को दूर करने के लिए स्वयं कुछ करना चाहती है। वाना में अपने स्त्रीत्व की नई पहचान बनाने की जागृति तब आती है जब डॉ सारिका उसे आगे की पढाई को प्रेरित करती है। वाना इस अविश्वास को तोड़ती है कि वह गृहणी से अधिक कुछ और नही बन सकती। "अंतर्वंशी से नारी के स्व की, अस्तित्व की, विलुप्त सरस्वती की खोज–यात्रा है।"[14] उषा प्रियंवदा वाना के विद्रोह के माध्यम से यह दर्शाना चाहती है कि स्त्री स्वतंत्र है वह जिससे चाहे प्रेम करे और जिसको चाहे उसको खुद को समर्पित करे अपना सब कुछ उसके ऊपर कोई बाध्यता नहीं होनी चाहिए।

"भया कबीर उदास" उपन्यास में लेखिका ने बिलकुल नयी सी दिखने वाली कथा–भूमि पर मानव मनन की चिरंतन लालसाओ, कामनाओ, उदासियो और निराशाओ का अत्यंत सहज ढ़ंग से अंकन किया है।"[15] उपन्यास की नायिका लिली पाण्डेय (यमन) पैतीस साल की अविवाहित नारी है। वाइस चान्सेलर पिता और हिंदी परिवेश की अंग्रेजी मम्मी की एकलौती संतान है जो पी. एच..डी करने अमेरिका गई है। लिली प्रतिभाशाली और बुद्धिशाली होने के कारण जीवन में पुरुष की आवश्यकता महसूस नही करतीद्यनायिका विदेश की भूमि में अपना सहज और अल्पकांक्षी जीवन जी रही होती है कि जाँच के बाद डॉ हैदर और डॉ अंजेला से अचानक उसे ज्ञात होता है कि उसे 'स्तन कैंसर' है और यह बीमारी इलाज के बाद अंततः उसके शरीर का सबसे प्रिय अंग से उसे वंचित कर देती है । शरीर की पूर्णता–अपूर्णता के प्रश्न किसी– न– किसी स्तर पर मन और जीवन की पूर्णता से जुड़ा होता है परन्तु लिली इन सामजिक रूढ़ियो को तोड़ती हुई अपूर्ण शरीर के होने के बाद भी जीवन से अपना अधिकार लेकर रहती है,जो एक स्वस्थ और सम्पूर्ण देह वाले व्यक्तियों क लिए स्वाभाविक हैद्यजीवन के प्रति सदा सकारात्मक रह कर लिली रेडियोथेरेपी के के बाद भारत लौटकर माँ से पुनः मिलकर मृत्यु के भय से मुक्त होकर 'वनमाली' नामक पुरुष को स्वीकार करती है । वह अब खुश है इसकी सार्थकता इन पंक्तियों में झलकती है–"वनमाली के साथ नीचे जाते हुए यमन का मन हो आया की कोई प्रार्थना करे । रवीन्द्रनाथ की पंक्तियों का भाव दोहराते हुए मन ही मन कहा ,प्रभु मै ऐसे ही नत और प्रस्तुत रहूँ और तुम मेरी अंजुली बार–बार भरते रहना ।"[16]

'नदी' उपन्यास 'स्त्री विमर्श'की दृष्टी से एक चर्चित उपन्यास है। स्त्री जीवन की रिक्तता ,अकेलेपन, शून्यता,नीरसता,उदासीनता,उसकी दुविधा, घुटन व्यर्थ की सामाजिक रुढियों से मुक्ति की आकांक्षा मोहभंग,स्त्री–पुरुष के बदलते संबंधो तथा उनसे उपजने वाली मानसिक अन्तर्द्वंद आदि का चित्रण करते हुए,स्त्री स्वाधीनता के अनेक प्रश्नों को उठाने का प्रयत्न उषा जी ने अपने इस उपन्यास के माध्यम से किया हैं।प्राचीन रुढियों और परम्परा सी टकराकर अपने 'स्व' और अस्मिता की खोज करते हुए"बस बहने दो जीवन सरिता को कही–न–कही जल्दी या देरी से कोई–न–कोई हल तो निकलेगा"इस सूत्र पर आधारित हैं।

विदेश में निवास करती 'आकाशगंगा'के पांच वर्ष क पुत्र 'भविष्य' की मृत्यु "बाल ल्यूकीमिया" से हो जाने पर पति डॉ गगनेद्र सिन्हा द्वारा इस हद तक पुत्र की मृत्यु की उत्तरदायी मानी जाती है कि परिवार से विच्छिन्न कर दी जाती है । पति गगनेन्द्र दो बेटियों सहित गंगा के पासपोर्ट आदि जरूरी कागजाद अपने साथ लेकर भारत लौट आते है जब गंगा अपने किसी संबंधी के घर गयी रहती है । यही से एकांकी छुट गई आकाशगंगा का संघर्ष प्रारम्भ होता है । विदेश की धरती पर बिना किसी पहचान के रहना एक स्त्री क्या एक पुरुष के लिए भी कितना कठिन है यह तो समझ ही सकते है । गंगा निरुपाय होकर अर्जुन सिंह और एरिक के प्रगाढ़ सम्पर्क में आती है । पति गगनेन्द्र के इस दुर्व्यवहार के कारण उसका मन पति के प्रति विद्रोही हो जाता है तभी वह एरिक से कहती है –"नही एरिक– कुछ भी हो मई उनसे समझौता नही करुँगी द्य उन्होंने मुझे बहुत रौंदा, बहुत कुचला और अंत में फटे चीथड़े की तरह, कूड़े–कचरे की तरह घर से निकाल कर फेक दिया । मै सम्मान से जीना चाहती हूँ भले ही मुझे झाड़ू लगाने का काम करना पड़े ।[17] क्योंकि पति द्वारा दिया गया हर जख्म उसके जीवन का नासूर बन गया था द्य गंगा पति द्वारा त्यागे जाने पर भी सामर्थ्यहीन नही होना चाहती । पुत्रियों के पति प्रेम–भाव के वशीभूत होकर भारत लौटकर सास–ससुर, बेटियों के आत्मीयता से घिरने लगती है । भारत में लौट कर भी वह इस तरह असंतुष्ट रहती है कि एक प्रायः अप्रत्याशित स्थिति उसे पुनः दूर देश ले जाती है । बेबसी निष्क्रियता का परित्याग करते हुए प्रवीण दम्पति के साथ रहकर गंगा जीवन का एक न्य अध्याय शुरू करती है, और एरिक के साहचर्य से उत्पन्न अपने प्राणप्रिय पुत्र 'स्तव्य स्टीवेन' के जन्म देकर पुनः भविष्य के तरह न खोने के भी से, बेटा नार्मल स्वस्थ रहे इसलिए अपने से अलग करके 'कैथरीन बसबी' को देकर अपने दिल पर पत्थर रख लेती है । आकाशगंगा अपने जीवन प्रवाह में जिन ऊँचाइयों, गहराइयों, मैदानों, घाटियों, संकीर्ण पथो प्रशस्त पाटो से गुजरती है उन्हें उषा प्रियंवदा ने जीवंत कर दिया है । आकाशगंगा से उषा जी स्त्री जीवन के कटु यथार्त का मार्मिक चित्रण किया है । इन समस्याओ का सामना करने क बाद भी जीवन पहचाती हुई गंगा मान लेती है –"नदी अपना सुंदरवन खोज ही लेगी अपना लक्ष्य सागर ।"[18]

उषा प्रियंवदा ने स्त्री जीवन के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक जीवन के विभिन्न गतिविधियों का जीवंत चित्रण अपने साहित्य में किया है । उषा प्रियंवदा ने नारी जीवन की विसंगतियो, नई परिस्थितियों तथा उलझनपूर्ण मनः स्थितियों में नारी के मिसफिट होने की प्रवृति को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है।आज स्त्री की बदलती हुई मान्यताओ विश्वासों और परिस्थितियों के बदलाव को लेखिका ने अपनी कलम का आधार बनाया है । आज का व्यक्ति नई परिस्थिति में स्वंय से टूटते हुए जिंदगी से जूझते हुए आर्थिक संकट से संघर्ष कर रहा है । स्त्री अस्मिता को लेकर बाहरी और भीतरी मोर्चे का अंतः संघर्ष लम्बे अरसे तक चला और इसे सामाजिक– साहित्यिक विमर्श का स्वाभाविक हिस्सा उषा जी ने बनाया है ।" इस प्रकार हम देख सकते है की उषा जी नारी अपने स्वत्व को पाने के लिए संघर्ष करती हुई आगे बढ़ती है और अंततः अपने अस्तित्व को पाने में वह सफलता प्राप्त करती है । उषा जी की लेखन यात्रा जैसे–जैसे आगे बढ़ती गई है वैसे ही उनकी नारी विकसित होती गई है। सुषमा जहाँ कुंठा और शोषण का शिकार होती है वही राधिका बिखरती है और यही से शुरू होती है अनु की शेषयात्रा, जिसे वाना पूरी करती है द्यवह न तो सुषमा की तरह सामाजिक शोषण का शिकार होती है और न ही राधिका की तरह भटकती है अनु पति के प्रेम पाने के लिए उसके

सामने गिड़गिड़ाती भी नहीं है । वह तो एक ही झटके में तमाम बन्धनों को तोड़ कर अपने स्वत्व को प्राप्त कर लेती है।यमन तक आते उनकी नारी संत कबीर की पंक्तियों पर अग्रसर खुद को कथनमुक्त करके नया जीवन जीने के लिए प्रस्तुत हो जाती है तो नदी आते आते 'गंगा' नामक स्त्री अपना सुन्दरबन खोज कर अपन जीवन का लक्ष्य पा लेती है।

उद्देश्य

'चेतना का अर्थ बताते हुए ,स्त्री चेतना का दर्शन करना। स्त्री चेतना स्वस्थ समाज के लिए अति अवश्यक है। एक मानवीय इकाई के रूप में सभ्यता और संस्कृति के सर्वागीण विकास में स्त्रियों की भागीदारी समाज के लिए अति महत्वपूर्ण है । उषा प्रियंवदा के उपन्यासों के स्त्री पात्रों के माध्यम से स्त्री विमर्श के विभिन्न आयामों से परिचित करना इस आलेख का मुख्य उदेश्य है।

निष्कर्ष

उषा प्रियंवदा ने स्त्री जीवन के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक जीवन के विभिन्न गतिविधियों का जीवंत चित्रण अपने साहित्य में किया है । उषा प्रियंवदा ने नारी जीवन की विसंगतियो, नई परिस्थितियों तथा उलझनपूर्ण मनःस्थितियों में नारी के मिसफिट होने की प्रवृति को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। आज स्त्री की बदलती हुई मान्यताओ विश्वासों और परिस्थितियों के बदलाव को लेखिका ने अपनी कलम का आधार बनाया है। आज का व्यक्ति नई परिस्थिति में स्वंय से टूटते हुए जिंदगी से जूझते हुए आर्थिक संकट से संघर्ष कर रहा है स्त्री अस्मिता को लेकर बाहरी और भीतरी मोर्चे का अंतःसंघर्ष लम्बे अरसे तक चला और इसे सामाजिक–साहित्यिक विमर्श का स्वाभाविक हिस्सा उषा जी ने बनाया है ।" इस प्रकार हम देख सकते है की उषा जी नारी अपने स्वत्व को पाने के लिए संघर्ष करती हुई आगे बढ़ती है और अंततः अपने अस्तित्व को पाने में वह सफलता प्राप्त करती है । उषा जी की लेखन यात्रा जैसे–जैसे आगे बढ़ती गई है वैसे ही उनकी नारी विकसित होती गई है । सुषमा जहाँ कुंठा और शोषण का शिकार होती है वही राधिका बिखरती है और यही से शुरू होती है अनु की शेषयात्रा, जिसे वाना पूरी करती है । वह न तो सुषमा की तरह सामाजिक शोषण का शिकार होती है और न ही राधिका की तरह भटकती है अनु पति के प्रेम पाने के लिए उसके सामने गिडगिडाती भी नहीं है। वह तो एक ही झटके में तमाम बन्धनों को तोड़ कर अपने स्वत्व को प्राप्त कर लेती है। यमन तक आते उनकी नारी संत कबीर की पंक्तियों पर अग्रसर खुद को कथनमुक्त करके नया जीवन जीने के लिए प्रस्तुत हो जाती है तो नदी आते आते 'गंगा' नामक स्त्री अपना सुन्दरबन खोज कर अपने जीवन का लक्ष्य पा लेती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिंदी साहित्य कोष–भाग १,परिभाषिक शब्दावली, पृष्ठ संख्या–२४७ ज्ञानमंडल लिमिटेड २००७ मई
2. नयना –समकालीन उपन्यास पृष्ठ–२०६ प्रकाशन संस्थान नयी दिल्ली–११०००२ संस्करण–२०१२
3. पूनम कुमारी–स्त्री चेतना और मीरा के काव्य पृष्ठ संख्या–३८ अनामिका पब्लिकेशन एंड डिस्ट्रीब्यूटर ४६६७६३,२१ ए अंसारी रोड ,दरियागंज नईदिल्ली ११०००२ संस्करण –२००६
4. महादेवी वर्मा – श्रृंखला की कड़ियाँ, पृष्ठ –२६ लोकभारती प्रकाशन २००१
5. मासिक हंस अंक,मई १९९३ में मृदुला गर्ग का लेख आधुनिक हिंदी कहानी नारी चेतना मर्द आलोचना पृष्ठ ३४
6. उषा प्रियंवदा दृपचपन खम्भे लाल दीवारे,पृष्ठ –१०४ राजकमल प्रकाशन २०१३
7. वही पृष्ठ–१०४
8. डॉ प्रमिला कपूर–भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएं, पृष्ठ–२४
9. प्रभा खेतान (अनुवादक)–स्त्री शिक्षा,पृष्ठ–२
10. उषा प्रियंवदा–रुकोगी नहीं राधिका, पृष्ठ–४३ राजकमल प्रकाशन १९८४
11. वही पृष्ठ–२६
12. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय दृदि्वतीय महायुध्दोतर हिंदी साहित्य का इतिहास.पृष्ठ–१३०राजपाज एंड संस कश्मीरी गेट,दिल्ल,६–१९७६
13. सुरेश सिन्हा दृहिंदी उपन्यासों की प्रवृतियों एवं दिशाओ के नए आयाम,३७० लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद ,१९७२
14. उषा प्रियंवदा – शेषयात्रा,पृष्ठ–१०४,राजकमल प्रकाशन –१९८४
15. डॉ शहनाज आकुली–उषा प्रियंवदा की उपन्यास सृष्टी ,पृष्ठ –४६ चिंतन प्रकाशन,कानपुर –२०११
16. वही पृष्ठ –५४
17. उषा प्रियंवदा दृभया कबीर उदास" पृष्ठ –१८४ राजकमल प्रकाशन ,२०११
18. उषा प्रियंवदा –नदी,पृष्ठ–४४ राजकमल प्रकाशन, २०१४